शोध मंथन Vol. XVI No.2 Apr.- June. 2025 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X, Impact Factor 8.877 (SJIF)
https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2025.v16i02.50

मैंला आँचल उपन्यास में चित्रित लोकजीवन

प्राप्तिः 15.04.2025
स्वीकृतः 22.05.2025

डॉ0 सुनीता देवी
एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी विभाग)
कुमारी विद्यावती आनन्द डी.ए.वी.
कॉलेज फॉर वूमेन, करनाल, हरियाणा
ईमेलः sunitasalaria1210@gmail.com

50

सारांश

लोकजीवन का अर्थ 'लोक' अर्थात् सामान्यजन का जीवन, उनके रहन–सहन, परिस्थितियों, परमपराओं, संस्कारों, आचार–विचार, रीति–रिवाज, प्रथाओं, मनोरंजन,लोक कलाओं, सामाजिक सम्बन्धों का चित्रण। यही लोकजीवन किसी भी उपन्यास को ठेठ भारतीय रूप प्रदान करता है। लोकजीवन से अभिप्राय मानवजीवन की सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों से है। जो लेखक जितनी यथार्थता से ग्रामीण जीवन का सच्चा चित्र अपने उपन्यास में समाहित करता है, वह उतना ही लोकप्रिय और प्रासंगिक होता है। लोकजीवन दूब की भाँति निरन्तर प्रवाहमान है और लोकजीवन की यह परम्परा पीढ़ी–दर–पीढ़ी पुष्पित और पल्लवित होती रहती है। डॉ॰ वासुदेवशरण अग्रवाल लोक की व्यापकता के सम्बन्ध में लिखते हैं – ''लोक के प्रत्येक दर्शन का सूत्र प्रत्येक शास्त्र के लिए आवश्यक है। भाषा, साहित्य, धर्म, संगीत, संस्कृति कला – जितना भी जीवन का विस्तार है, सबमें भारतीय मानव के पूर्व और नूतन इतिहास की. छानबीन करनी होगी। लोक के रहन–सहन का सर्वांगीण अध्ययन, निरीक्षण, लोकचित्रण और प्रकाशन ही हमारे भावी कार्य की गतिविधि होनी चाहिए। यह लोक अनेक प्रकार से फैला हुआ है। प्रत्येक वस्तु में यह प्रभूत है।''[1] लोकजीवन का साहित्य और कला से घनिष्ठ सम्बन्ध विषयक शुक्ल जी के विचारों को उल्लिखित करते हुए अपनी पुस्तक 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना' में रामबिलास शर्मा जी ने लिखा है – मनुष्य लोकबद्ध प्राणी है। उसका अपनी सत्ता का ज्ञान तक लोकबद्ध है। लोक के भीतर ही कविता क्या, किसी कला का प्रयोजन और विकास होता है। सच्चा कवि वही है जिसे लोक–हृदय की पहचान हो, जो अनेक विशेषताओं और विचित्रताओं के बीच मनुष्य जाति के सामान्य हृदय को देख सके। इसी लोक–हृदय में के लीन होने की दशा का नाम रसदशा है।'' अतः लोकजीवन का अर्थ लोक अर्थात् सामान्यजन का जीवन है जिसके अन्तर्गत उपन्यास में सामाजिक सम्बन्ध, संस्कार, परम्परा, रीति–रिवाज, मान्यताएँ, साम्प्रदायिक सद्भाव, लोकगीत, लोककथाओं तथा मनोरंजन आदि का चित्रण किया जाता है।

फणीश्वर नाथ रेणु कृत ''मैला आँचल'' उपन्यास भी लोकजीवन और ग्रामीण भारतीय संस्कृति को उजागर करता है। उन्होंने इस उपन्यास में लोकजीवन की विभिन्न समस्याओं, विशिष्टताओं, चरित्रों, छवियों, कलाओं, बोलियों, भंगिमाओं, मुहावरों आदि को अत्यन्त आत्मीयता और

स्वाभविकता के साथ चित्रित किया है। रेणु जी को आँचलिक जीवन का लेखक कहा जाता है। वस्तुतः आँचलिक जीवन से तात्पर्य लोकजीवन से ही है। रेणु जी ने बिहार राज्य के अंचल–विशेष 'पूर्णिया' को कथ्य के रूप में लिया है परन्तु इसे अंचल विशेष तक सीमित करके नहीं देखा जा सकता है। उपन्यासकार ने जो लोक–समस्याएँ, लोक–परम्पराएँ, लोकचरित्र, लोकगीत, लोकभाषा और लोक विशिष्टताएँ 'मैला आँचल' उपन्यास में चित्रित की हैं, वे सभी भारत देश के ग्रामीण जन–जीवन में सामान्य रूप से दिखाई पड़ती हैं। अँचल विशेष की बोली और अल्प स्थानीय समस्याओं को छोड़ कर अधिकतर लोकजीवन की प्रवृतियाँ प्रत्येक लोक–समाज में देखी जा सकती हैं।

रेणु जी के उपन्यास 'मैला आँचल' में लोकजीवन का सच्चा चित्र अपनी सम्पूर्णता के साथ चित्रित हुआ है। रेणु जी ने उपन्यास के आरम्भ में लिखा भी है – ''इसमें फूल भी हैं और शूल भी, धूल भी है, गुलाब भी है, कीचड़ भी है, चंदन भी है, सुन्दरता भी है, कुरूपता भी – मैं किसी से दामन बचाकर निकल नहीं पाया।''[3] इससे स्पष्ट होता है कि उन्होंने लोकजीवन की सुन्दरता के साथ–साथ उसकी समस्याओं, विकृतियों को भी अत्यन्त सहजता से चित्रित किया है।

रेणु जी ने 'मैला आँचल' उपन्यास में गाँव के अनपढ़ किसान के शोषित जीवन का विस्तृत वर्णन किया है। गाँव का तहसीलदार निरक्षर किसान का शोषण–उत्पीड़न करता है। किसान की दशा का चित्रण रेणु जी ने इस प्रकार किया है – ''खम्हार! साल भर की कमाई का लेखा–जोखा खम्हार में ही होता है। ....साल–भर के कर्ज का हिसाब करके चुकाओ। बाकि यदि रह जाए तो फिर सादा कागज पर अँगूठे का टीप लगाओ। सफाई करनी है तो बैल–गया भरना रखो या हलवाहा–चरवाहा दो। फिर कर्ज खाओ। खम्हार का चक्र चलता रहता है। खम्हार में बैलों के झुण्ड से पबनी–मड़नी होती है। बैलों के मुँह में जाली का 'जाब' लगा दिया जाता है। गरीब और बेजमीन लोगों का सम्हार के बैलों जैसा है।''[4] बैलों के मुँह में लगा जाली का 'जाब' बेबसी और शोषण का प्रतीक है। बैलों की भाँति अनपढ़ किसान भी इसी बेबसी को सहन करने के लिए मजबूर है। अतः उपन्यासकार ने 'मैला आँचल' में लोकजीवन के महत्त्वपूर्ण घटक निरक्षर किसान के सामाजिक जीवन और आर्थिक स्थिति का चित्रण कर उसके शोषित जीवन को उजागर किया है।

भारतीय लोकजीवन अर्थात् ग्रामीण जीवन में जाति–प्रथा भी विकराल रूप में विद्यमान है। इसी जाति–व्यवस्था का वर्णन करते हए रेणु जी लिखते हैं – ''मेरीगंज एक बड़ा गाँव है, बारहों बरन के लोग रहते हैं।.... गाँव में तीन प्रमुख दल हैं – कायस्थ, राजपूत और यादव। ब्राह्मण लोग अभी भी तृतीय शक्ति हैं। गाँव के अन्य लोग भी सुविधानुसार इन्हीं तीनों दलों में बँटे हुए हैं।''[5] ''ऐसा ही मेरीगंज, जो जात–पात की डोर पर टँगा है। जातियों के ताने–बाने को रेणु ने बहुत ही सूक्ष्मता से समझा है। वह ग्रामीण यथार्थ की परतों को साफ–साफ, रेशे–रेशे उभारकर रखते हैं और हमें हैरान करते हैं, अचरज में डालते हैं। गाँवों के सामाजिक यथार्थ को इतनी समझदारी से समाजशास्त्रियों ने भी नहीं प्रस्तुत किया है।''[6] रेणु जी ने 'मैला आँचल' में जातिगत व्यवस्था को लोकजीवन की आधारभूत कड़ी के रूप में उजागर किया है। उपन्यास के प्रमुख पात्र डॉ॰ प्रशांत कहते हैं – ''नाम पूछने के बाद ही लोग यहाँ पूछते हैं – जात? जीवन में बहुत कम लोगों ने प्रशांत से उसकी जाति के बारे में पूछा है लेकिन यहाँ तो हर आदमी जाति पूछता है। प्रशांत हँसकर कभी कहता है – जाति डॉक्टर .... जाति बहुत बड़ी चीज है। जात–पात नहीं मानने वालों की भी जाति होती है। सिर्फ हिंदू कहने

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2025.v16i02.50

से ही पिंड नहीं छूट सकता। ब्राह्मण है .... कौन ब्राह्मण, गोत्र क्या है? मूल कौन है? शहर में कोई किसी से जात नहीं पूछता। शहर के लोगों की जाति का क्या ठिकाना और गाँव में तो बिना जाति के आपका पानी नहीं चल सकता।''[7] उपन्यास के पात्र बावनदास के माध्यम से रेणु जी ने कहलवाया है – ''अब लोगों को चाहिए कि अपनी–अपनी टोपी पर लिखवा लें – ब्राह्मण, राजपूत, कायस्थ, यादव, हरिजन ..... कौन कार्यकर्त्ता किस पार्टी का है, समझ में नहीं आता। जुलुम हो रहा है? जी हाँ, जुलुम हो रहा है।''[8] 'मैला आँचल उपन्यास के पात्रों के कथनों के माध्यम से स्पष्ट होता है समाज में जातिगत व्यवस्था पूर्णरूपेण व्याप्त है तथा लोकजीवन का अभिन्न अंग है। जाति के आधार पर ही राजनीति चलती है। लोकजीवन में गहराई से जड़ें जमाए इसी जाति–व्यवस्था का चित्रण रेणु जी ने अपने उपन्यास 'मैला आँचल' में अत्यन्त यथार्थता के साथ किया है।

'धर्म' लोकजीवन का महत्त्वपूर्ण पक्ष है जिसका 'मैला आँचल' उपन्यास में अनेक स्थलों पर वर्णन मिलता है। इस उपन्यास में धर्म लोकजीवन को प्रभावित करता है। 'मैला आँचल' उपन्यास में वर्णित मेरीगंज गाँव के लोगों के धार्मिक जीवन में वहाँ स्थित मठ का विशेष सम्बन्ध है। मेरीगंज के किसान तथा अन्य सामान्य जन अत्यन्त धर्म भी हैं। रेणु जी ने गाँव में व्याप्त धार्मिक पाखण्ड को उजागर करते हुए वहाँ के पुजारी के धार्मिक पाखण्ड को चित्रित किया है। मठ के व्यभिचारी महंत धर्म के प्रतिनिधि बने हुए हैं। उन्हें सांसारिक मोह–माया से मुक्त जीवन जीना होता है। यदि वे विवाह कर गृहस्थ जीवन अपनाते हैं तो उनकी महंतगिरी समाप्त हो जाती है। महंत इसका समाधान निकालते हुए मठ के पुराने सेवक की बेटी लक्ष्मी को कानूनी लड़ाई लड़ने के बाद अपने मठ पर ले जाते हैं और उस अबोध बालिका का शारीरिक शोषण कर उसका जीवन बर्बाद कर देते हैं। उपन्यास के पात्र यादव टोली के किसनू कहता है –''महंत जब लक्ष्मी को मठ पर लाया था तो वह एकदम अबोध थी। ... कहाँ वह बच्ची, कहाँ यह पचास बरस का बूढ़ा गिद्ध। रोज रात में लक्ष्मी रोती थी – ऐसा रोना कि सुनकर पाथर भी पिघल जाए।''[9] ऐसे व्यभिचारी महंत को निर्दोष बताते हुए सारा दोष मासूम लक्ष्मी के सिर पर ही मढ़ दिया जाता है। रेणु जी लिखते हैं –''चढ़ती जवानी में सतगुरु साहेब की दया से माया को जीतकर ब्रह्मचारी रहे। बुढ़ौती में तो आदमी की इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं, माया के प्रबल धात को नहीं संभाल सकती है। इसीलिए तो साधु–ब्रह्मचारी लोग बुढ़ापे में ही माया के बस में हो जाते हैं। यह तो महंथ साहेब का दोख नहीं। उसका भाग ही खराब है। यदि वह नहीं होती तो महंथ साहेब सतगुरु के रास्ते से नहीं डिगते। यह ध्रुव सत्त है। दोख तो लक्ष्मी का है। एक ब्रह्मचारी का धरम भ्रष्ट करने का पाप उसके माथे है।''[10]

मेरीगंज गाँव के लोगों के जीवन में अंधविश्वास पूणरूपेण व्याप्त है। इस गाँव में आधुनिक वैज्ञानिक शिक्षा का प्रचार–प्रसार नहीं हुआ इसलिए ग्रामीणों के सामाजिक जीवन में अंधविश्वास फैला हुआ है। गाँव में हैजा रोग फैला हुआ है। डॉ॰ प्रशांत बचाव के लिए टीकाकरण और कुओं के पानी में दवा डालने का अभियान चलाना चाहते हैं तो गाँव के लोग अंधविश्वास के कारण उनका विरोध करते हैं। रेणु जी लिखते हैं – ''हैजा के पहले रोगी को बचा लिया गया, लेकिन गाँव को नहीं बचाया जा सकता। डॉक्टर ने ढोल दिलवाकर लोगों को सूई लेने की खबर दी, लेकिन कोई नहीं आया। कुआँ में दवा डालने के समय लोगों ने दल बाँध कर विरोध किया – चालाकी रहने दो। डॉक्टर कपों में दवा डालकर सारे गाँव में हैजा फैलाना चाहता है।''[11] इसके अतिरिक्त रेणु जी इस

उपन्यास की स्त्री पात्र पार्वती की माँ और कमली के माध्यम से उजागर करते हैं कि किस अंधविश्वास के कारण इन दोनों का जीवन बर्बाद कर दिया जाता है। पार्वती जी माँ करुणामयी और वत्सल हृदय नारी है किन्तु समाज उसे डायन घोषित करके उसकी हत्या कर देता है। दूसरी स्त्री पात्र कमली का तीन बार रिश्ता टूटने के कारण लोग उसे अपशकुनी मानने लगे हैं अतः सारे समाज के द्वारा अपशकुनी मानने के कारण कमली मानसिक रूप से बीमार हो जाती है। इसके अतिरिक्त गाँव में अंधविश्वास से युक्त मनघड़ंत कहानियाँ भी लोगों द्वारा एक–दूसरे को सुनाई जाती हैं – ''बलदेव जी ने तो बहुत बार भूत को अपनी आँखों से देखा है। भैंस के पीछे–पीछे खैनी–तम्बाकू माँगा हैं। भूत डाकिन का पाँव उलटा होता है और वह पेड़ की डाल से लटक कर झूलती है।''[12]

लोकजीवन में मनोरंजन का भी विशेष महत्त्व है। गाँव–देहात में यह मनोरंजन लोकगीतों, लोककथाओं आदि के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। 'मैला आँचल' उपन्यास में भी रेणु जी ने अनेक लोकगीतों का प्रयोग कर लोकरंजन को चित्रित किया है। एक गाड़ीवान गाड़ी चलाते हुए लोकगीत गाता जा रहा है जिसमें ननद–भाभी का संवाद देखने को मिलता है –

चड़ली जवानी मेरा अँग–अँग फड़के रे,
कब होइ है गवना हमार रे भउंजिया।।''[13]

रेणु जी ने लोकगीत के माध्यम से तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक छल–कपट को भी उजागर किया है। 'होली के प्रसंग' में कालीचरण का दल – बुरा न मानो होली है – का लाभ उठाकर अपने होली गीत में विरोधियों को निशाना बनाता है –

''तीन ताल पर ढोलक बाजे।
तक धिना धिन, धिन्नक तिन्नक....जोगी...जी...
चर्खा कातो, खद्दड़ पहनो, रहे हाथ में झोली
दिन दहाड़े कर डकैती, बाल सुराजी बोली...
जोगी जी सर... र... र...।''[14]

'मैला आँचल' उपन्यास में लोककथाएँ भी लोगों के मनोरंजन का साधन रही हैं। लोककथाएँ चौपाल में गायी जाती हैं। वास्तव में ये गीत–कथाएँ होती हैं। उपन्यास के पात्र खलासी 'सारंगा सदाब्रिज' की कथा गाते हैं। लोग उन्हें गाते रहने का आगह करते हैं। लोग सुनते हैं, आनन्द लेते हैं और बात खत्म हो जाती है लेकिन यह गीत–कथा खलासी (पुरुष पात्र) और फुलिया (स्त्री पात्र) की प्रेम कथा का प्रतीक बन जाती है। खलासी जी फुलिया से शादी करना चाहते हैं लेकिन फुलिया की माँ यह शादी स्वीकार नहीं करती। रेणु जी लिखते हैं – ''खलासी जी आज दिल खोलकर गा रहे हैं। उन्हें आज ऐसा लग रहा है कि वे खुद सदाब्रिज हैं। लेकिन न तो उसकी फुलिया उसे रहने के लिए विनती करती है और न महगूँदास चुमौना की बात मंजूर करता है।....अरे सूते ले दैबो हे प्यारे लाली पलँगिया से... खाए ले गुआ खिल्ली पान जी ...।''[15] फुलिया भी समझती है कि खलासी ने उसी मेरे लिए ही गा रहे हैं लेकिन वह कुछ कह नहीं पाती।

लोकजीवन की भाषा–शैली में मुहावरे, लोकोक्तियों और सूक्तियों के चमत्कारपूर्ण प्रयोग की विशिष्टता होती है जो कि लोकजीवन में व्याप्त अनुभवों पर आधारित होते हैं। 'मैला आँचल' उपन्यास

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2025.v16i02.50

में भी अनेक स्थानों पर लोकजीवन की अनुभूत सच्चाईयों का प्रयोग देखा जा सकता है। उदाहरणस्वरूप कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं – माघ का जाड़ तो बाध को भी ठण्डा कर देता है।''[16] ''तसहीलदार साहब की बेटी कमली जब रामकौआ साबुन से नहाने लगती है तो सारा गाँव गमगम करने लगता है।''[17]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि फणीश्वरनाथ रेणु जी के 'मैला आँचल' उपन्यास में लोकजीवन की यथार्थता पूर्णतः चित्रित हुई है। निरक्षर किसान–मजदूर का शोषण लोकजीवन में व्याप्त जातीय व्यवस्था, धार्मिक जीवन, अंधविश्वास आदि के चित्रण के साथ–साथ लोकजीवन में व्याप्त लोकगीतों, लोककथाओं, मुहावरों, लोकोक्तियों की मिठास, मनोरंजन, आकर्षण और आत्मीयता को भी उजागर किया है। डॉ॰ लालचंद गुप्त 'मंगल' के शब्दों में – ''आँचलिक उपन्यासों में किसी अँचल या प्रदेश–विशेष की लोक–संस्कृति और जनजीवन का यथातथ्य चित्रण किया जाता है। इस धारा का श्री गणेश करने का श्रेय श्री फणीश्वरनाथ रेणु को है। इस दृष्टि से उनके 'मैला आँचल' और 'परती परिकथा' नामक उपन्यास विशेष ख्याति अर्जित कर चुके हैं।''[18]

सन्दर्भ

1. डॉ॰ वासुदेवशरण अग्रवाल, सम्मेलन पत्रिका, लोक संस्कृति अंक पृ० सं०–66–67
2. डॉ॰ रामबिलास शर्मा, आचार्य रामचंद्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 5वाँ संस्करण – 2017, पृ० सं०–30
3. फणीश्वरनाथ रेणु, मैला आँचल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 41वाँ संस्करण– 2018, भूमिका से।
4. वही, पृ० सं०–15
5. वही, पृ० सं०–16
6. संवेद, फणीश्वरनाथ रेणु शताब्दी स्मरण, मार्च – 2021, पृ० सं०–35
7. फणीश्वरनाथ रेणु, मैला आँचल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 41वाँ संस्करण– 2018, पृ० सं०–53–54
8. वही, पृ० सं०–194
9. वही, पृ० सं०–28
10. वही, पृ० सं०–50
11. वही, पृ० सं०–156–157
12. वही, पृ० सं०–117
13. वही, पृ० सं०–77
14. वही, पृ० सं०–139–140
15. वही, पृ० सं०–65
16. वही, पृ० सं०–24
17. वही, पृ० सं०–43
18. डॉ॰ लालचन्द गुप्त 'मंगल' हिन्दी साहित्य का इतिहास, युनिवर्सिटी बुक सैन्टर, थर्ड गेट, कुरुक्षेत्र, द्वितीय संस्करण, 1999, पृ० सं०–231